UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal : Drawing
Research Link - 162, Vol - XVI (7), September - 2017, Page No. 111-112
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

चित्रकला के उद्‌भव और विकास में कल्पना का योगदान

प्रस्तुत शोधपत्र में चित्रकला के उद्‌भव और विकास में कल्पना के योगदान पर विचार किया गया है। इस समय बाजारवाद के दौर में, सामाजिक चिंता का मुद्दा यह होना चाहिए कि कलाएँ दम तोड़ रही हैं, उनके अस्तित्व का संकट सामने है। उनकी सुरक्षा, संरक्षा, पल्लवन, पोषण, प्रोत्साहन आदि का अभाव है। कलाएँ किसी भी राष्ट्र की बहुत बड़ी धरोहर होती है, जो मनुष्य को मनुष्य से, समाज को समाज से जोड़ती है। दूरियाँ पाटकर शांति, सहयोग का पाठ पढ़ाती हैं। इन्हें जीवित रखना हमारा पुनीत कर्तव्य है। कलाएँ जीवित रहेंगी, तो आनन्द के लोक में बिना किसी भेदभाव के एक साधारण व्यक्ति भी रोजमर्रा के तनाव से मुक्त अनुभव कर सकता है।

डॉ.(श्रीमती) वीणा चौबे

कलाकार का नामकरण यद्यपि बहुत बाद में आया होगा, क्योंकि कलाओं की उत्पत्ति मनुष्य की कल्पना और उसकी उड़ानों से जुड़ी है। उसमें उन्मुक्त होकर जो कुछ भी गुनगुनाता है, प्रकृति को देखता और उसकी सुन्दरता की मादकता में डूबते हुए जो कुछ भी भाव-भंगिमाएँ व्यक्त होती हैं और जो कुछ भी गुनगुनाता या चितरता है, वही चित्रकला का उद्‌गम स्थान माना जा सकता है। एक कलाकार अपनी कल्पनाओं के माध्यम से अपनी अभिव्यक्ति को रंग, रेखाओं से नये रुपों में उकेरता है। वो अपने मन की दुनिया में डूबा हुआ एक कृति को रचने की सृजन प्रक्रिया से गुजरता है और उस कृति को सुन्दर रुप देने के लिए रेखाओं, रंगों और विभिन्न आकारों का रुप देकर कैनवास पर उतार देता है।

कहा जाता है कि कला हमारे विचारों का दृश्य रुप है, जो कल्पना शक्ति और सृजन शक्ति के संयुक्त होने पर कलाकार की मनो-भावनाओं को अभिव्यक्ति देता है। यह भी सच है कि यहाँ हमें याद आता है प्लेटो का वह स्मरण जो कहते हैं कि सभी कलाएँ अनुकृति की अनुकृति हैं। मानव ने जैसा चाँद, सूरज, आकाश, चिड़िया, नदी, पहाड़, झरने, फूल, तितलियाँ देखीं, उन्हीं की शक्ल और उसी दृश्य को अभिव्यक्ति देने के लिए छटपटा उठा। ....और उसकी इसी बेचैनी ने चित्रकला को न केवल जन्म दिया, वरन् आदिकाल से आज तक लगातार अपने अस्तित्व में बनी हुई है।

कला का इतिहास देखें तो आदिकाल से आज तक एक लम्बा कालखण्ड यद्यपि बीत चुका है। इसके उदय और विकास का इतिहास जितना ही पुराना है, उतना ही विस्तृत है। कला के सभी रुप प्रारंभ से लेकर आज तक के धर्मग्रंथों में देखे जा सकते हैं।

ऐतिहासिक कालक्रम में देखें तो वैदिक ऋचाओं के साथ-साथ वेदों के मंत्र उस काल के ऋषि, तपस्वी, मुनि से लेकर लोक-जीवन तक फैली कलाएँ प्रकृति की अनुरागी और अनुयायी प्रतीत होती हैं। चित्रकला में प्रकृति भी है और आसपास फैली हुई दुनिया भी। वैदिक युग की अन्य कलाओं, चाहे वह नृत्य हो, साहित्य हो, नाटक हो, कहानी हो, यहाँ तक कि कला-कौशल आदि के मनोरंजन और उसके माध्यमों में भी कलाएँ शामिल हैं, जो उन वाद्य यंत्रों या उपकरणों को सौन्दर्य से भर देती है। सौन्दर्य की रचना करना चित्रकला का सबसे बड़ा काम है। सौन्दर्य, आनन्द की एक अलग दुनिया में ले जाता है। सभी कलाएँ अपनी दुनिया से काटकर आनन्द की अलग दुनिया में ले जाने का माध्यम होती हैं, जैसे ही कोई सुन्दर चित्र सामने आता है, किसी को भी अपनी ओर लुभाता है और दर्शक उसमें डूब जाता है।

कलाओं के शास्त्र, सिद्धांत और सौन्दर्य के पैमाने रचते हैं। किन्तु, प्रकृति के आंगन में फैला हुआ सौन्दर्य, ...शास्त्रों का मोहताज नहीं होता है। वह तो सभी बंधनों से मुक्त होता है और जो कला बंधनों से मुक्त होती है, वही मानव मात्र को त्रास से बचाकर मुक्त कर सकती है। जो स्वयं मुक्त नहीं है, वह मुक्त नहीं कर सकता। इस मायने में कलाओं की अपनी एक अलग सत्ता है, यही उसकी ताकत है, यही उसका सौन्दर्य है और यही उसकी आत्मा है, जो 21 वीं शताब्दी के चकाचौंध भरे समाज में भी उसके अस्तित्व को बचाये और प्रांसगिक बनाए हुए है।

चित्रकला को जीवित रखने में प्राचीन भारतीय समाज के अनुष्ठान, तीज-त्यौहार, धार्मिक व्रत, मंगल कार्यों आदि का योगदान रहा है, क्योंकि लोक-चित्रकला ही पूजा विधान और आस्था का माध्यम रही है। वेदों के साथ ही पुराणों में भी चित्रकला मिलती है। विष्णु पुराण में भी चित्रकला एक अंग बनी हुई है। विष्णु पुराण की रचना 66वीं सदी के लगभग की मानी जाती है। इसके तीन खण्ड है। 35वें अध्याय से लेकर 43वें अध्याय तक ''चित्रसूत्र'' नामक एक प्रकरण है। इसके 9 अध्यायों को पढ़कर भी भारतीय चित्रकला की व्यापकता और इसके प्राचीनतम रुप की महत्वपूर्ण जानकारी उपलब्ध होती है।

संस्कृत साहित्य के बाद रामायण, महाभारत, अष्टाध्यायी, कामसूत्र, विनयपिटक, मेघदूत, उम्मग जातक आदि ग्रंथों में भी साहित्य के साथ

विभागाध्यक्ष (चित्रकला विभाग), अटल बिहारी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (मध्यप्रदेश)

चित्रकला का भरपूर उपयोग मिलता है। रामायण में प्रकृति और नारी सौन्दर्य का वर्णन मिलता है। साथ ही मय नामक शिल्पी द्वारा निर्मित सीता की स्वर्ण प्रतिमा, रथों की साज-सज्जा, भित्तियों और कक्षों और पुष्पक विमानों पर चित्रांकन मिलते हैं। इसी तरह कैकेयी के राजप्रासाद, रावण के चित्रों से सज्जित पालकियों तथा अन्य स्थापत्य कलाओं के अंग जैसे रंगमंच आदि में भी चित्रकला के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं।

महाभारत में वीरों की जय-जयकार के चित्रण, सत्यवान द्वारा घोड़ों का चित्रांकन करना, मयासुर द्वारा निर्मित युधिष्ठिर का सभागृह, लाक्षागृह का निर्माण आदि के वर्णन मिलते हैं। यहाँ भी चित्रों का उपयोग होने के साथ-साथ रुप भेदों पर भी प्रकाश डाला गया है। महाभारत के 18वें अध्याय में 19 प्रकार के रुप (स्वरुप चित्र) मिलते हैं। अष्टाध्यायी के रचनाकार पाणिनि ने भी पशु, पक्षी, नदी, पर्वत आदि के सांकेतिक लक्षण और उनको अंकित करने की विधि बताई है। चित्रों का उपयोग तो किया ही गया है।

जैन एवं बौद्ध साहित्य में भी तथा संस्कृत के महाकाव्य, नाटक, कोश, पंचतंत्र, जातक कथाओं की तरह से भारतीय चित्र परम्परा के प्रमाण मिलते हैं। 16वीं सदी के बौद्ध इतिहासकार लामातारा नाथ ने भारतीय कला-कौशल को अति प्राचीन माना है। ''चित्रसूत्र'' में भी वास्तुकला, मूर्तिकला एवं चित्रकला तीनों का विवेचन मिलता है। इसके साथ ही अन्य कलाओं में नृत्य, गीत, संगीत का भी वर्णन आया है। चित्रकला की उत्पत्ति की कथा भी इसमें मिलती है। ऋग्वेद में चमड़े पर बने अग्निदेव के चित्र भी इसके प्राचीनतम होने का प्रमाण है।

तंजौर से प्राप्त हलादा कृत चित्र लक्षण नामक ग्रंथ में शरीर के अंगों की विशेषताओं आदि का उल्लेख मिलता है। विश्वकर्मा की चर्चा भी उसी में मिलती है। विश्वकर्मा को प्रथम व महान चित्रकार माना जाता है। वह कला-कौशल व भवन निर्माण कला के विशेषज्ञ रहे हैं।

अशोक के काल में भी कल्पना द्वारा मिलने वाला सृजन चित्रकला का प्रमाण है। यह इस बात का भी प्रमाण है कि रचना और कला, दोनों साथ-साथ चली आई है। कल्पना एक मानसिक क्रिया है, जिसमें पूर्व में किये गये अनुभवों को नए ढंग से संगठित करने का विचार आता है और कलाएँ या चित्रकला इसकी सार्थक अभिव्यक्ति होती है। चित्रकला के अस्तित्व के और भी कई प्रमाण मिलते हैं, जिनमें यह माना गया है कि कल्पनाशक्ति से चित्रों की रचना की जाती रही है। इस संदर्भ में गिरिराज किशोर अग्रवाल का विचार है कि, 'ऊषा और अनिरुद्ध' की प्रेम कहानी में ऊषा के प्रेमी को पहचानने के लिए उसने बहुत सारे चित्र बनाए थे। जिनको देखकर, ऊषा ने अपने प्रेमी का चित्र पहचान लिया था।

नग्नजीत कृत 'चित्र लक्षण' में भयजीत नामक राजा की कहानी का उल्लेख मिलता है। इसमें ब्रह्मा ने राजा को ब्राह्मण के पुत्र का चित्र बनाने के लिए कहा था और वह चित्र राजा ने अपनी कल्पना से ही बनाया था।

और भी कई उदाहरण दिए जा सकते हैं, जिनसे चित्रकला में कल्पना के योगदान की पुष्टि होती है। इन उदाहरणों को पढ़-सुनकर भी सरलता से अनुभव किया जा सकता है कि कला की पाठशाला में किसी भी विद्यार्थी को चित्रकला या चित्र निर्माण की शिक्षा नहीं दी जा सकती है। उसे अभ्यास और साधना करनी ही पड़ती है, लेकिन इसके पहले भी कलाकार में कल्पनाशीलता या कल्पना की प्रतिभा होना आवश्यक है। किसी को भी कल्पना करना नहीं सीखाया जा सकता है। रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि, कल्पना शक्ति एक देन होती है, जो ईश्वरीय होती है। कल्पना के चित्रकला में योगदान के विचार को और आगे देखें तो चित्रकार किसी दर्शन का भी भूखा नहीं होता है, बल्कि वह अपनी कल्पना शक्ति के आधार पर नवीन निर्माण करने का प्रयत्न करता रहता है। वह एक नये संसार की कल्पना करके उसको अद्‌भूत रुप, सौन्दर्य प्रदान करता है। पाश्चात्य चित्रकारों के बारे में भी ज्ञात होता है कि यूरोपीय चित्रकार कल्पना का उपयोग करते रहे हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आधुनिक चित्रकला के पृष्ठ 172 पर बताया है कि, यूरोपीय चित्रकार लियोनार्डो दा विंची इसी प्रकार का एक महान काल्पनिक चित्रकार था। उसने अपनी कल्पना के बल पर वायुयान जैसे यातायात के माध्यम की कल्पना की थी। ये उस समय अविष्कृत भी नहीं हुए थे, तब इस प्रकार के उड़ने वाले वायुयानों और उपकरणों को अपने चित्रों में अंकित किया था। इससे भी चित्रकला में कल्पना के योगदान का प्रमाण मिलता है।

इस प्रकार सम्पूर्ण विवरण और अध्ययन से यह प्रमाणित होता है कि मनुष्य ने कितने ही माध्यमों का उपयोग करके कल्पना शक्ति के माध्यम से सृजन और उपकरण आदि का निर्माण किया है। आदिम युग में देखें तो मनुष्य ने पार्थिव वस्तुओं को आध्यात्मिक रुप देने के लिए आकाश, पृथ्वी, ग्रह, नक्षत्रों, नदियों, पर्वतों के रहस्यों को अपनी कल्पना से आंकने के यत्न किये हैं। उसने उन सभी वस्तुओं में एक अदृश्य शक्ति की कल्पना की है, जिन वस्तुओं को वह जान न सका, जो सामने नहीं थी, उनके भी रुप-स्वरुप को कल्पना से निर्मित किया है।

इसी प्रकार साहित्य और इतिहास में कला के योगदान और उसकी भूमिका के प्रमाण उपलब्ध हैं। मानव जीवन की आधारशिला, शिक्षा और संस्कृति है। सांस्कृतिक अभिरुचियों को अभिव्यक्त करने में कला का महत्वपूर्ण स्थान निश्चित है। इन कलाओं को सम्पूर्णता देने के लिए हमारे शास्त्रों का योगदान रहा है। इन शास्त्रों के द्वारा जिन कलाओं का जन्म हुआ है, उन्हें शास्त्रीय कलाओं का नाम दिया गया है। ये कलाएँ सुदूर अतीत से एकाकार होकर निरंतर आगे बढ़ते हुए विकसित होती रही हैं। समय, काल और राजाओं द्वारा पोषित और पल्लवित की जाती रही है। कलाएँ जीवन में सुकून देती हैं। कला के सर्जन द्वारा नई सृष्टि की रचना की जाती है, जो सौन्दर्य के साथ-साथ भरपूर आनन्द के लोक में ले जाने में समर्थ होती है। जब चित्रों के साथ हमारा एकाकार या साधारणीकरण होता है, तो हम यह भूल जाते हैं कि चित्र और हम भिन्न-भिन्न हैं। यह भूलना ही चित्रकला की सबसे बड़ी शक्ति कही जा सकती है। बाजारवाद के आज के दौर में, सामाजिक चिंता का मुद्दा यह होना चाहिए कि कलाएँ दम तोड़ रही हैं, उनके अस्तित्व का संकट सामने है। उनकी सुरक्षा, संरक्षा, पल्लवन, पोषण, प्रोत्साहन आदि का अभाव है। कलाएँ किसी भी राष्ट्र की बहुत बड़ी धरोहर होती है, जो मनुष्य को मनुष्य से, समाज को समाज से जोड़ती है। दूरियाँ पाटकर शांति, सहयोग का पाठ पढ़ाती हैं। इन्हें जीवित रखना हमारा पुनीत कर्तव्य है। कलाएँ जीवित रहेंगी, तो आनन्द के लोक में बिना किसी भेदभाव के एक साधारण व्यक्ति भी रोजमर्रा के तनाव से मुक्त अनुभव कर सकता है।

संदर्भ :

(1) शास्त्री, गंगाराम : भारतीय संस्कृति।

(2) अग्रवाल, गिरिराज किशोर : कला निबंध।

(3) मध्यप्रदेश की लोक कला।

(4) शुक्ल, आचार्य रामचन्द्र : आधुनिक चित्रकला का इतिहास।

(5) अग्रवाल, आर.एन. : भारतीय चित्रकला की विवेचना।

❁❁